अध्याय–5

उपसंहार

उपरोक्त अध्यायों में विवेचित साक्ष्यों का अनुशीलन करने के पश्चात् यह ज्ञात होता है कि भारतीय इतिहास के प्रारम्भ से ही दासता का प्रयोग किसी न किसी रूप में होता रहा है। यद्यपि एक संस्था या वर्गीय संरचना के रूप में इनका विकास ऐतिहासिक काल में ही हुआ परिलक्षित होता है। क्योंकि प्रागैतिहासिक समतवादी आदिम सामाजिक संरचना में दासता के विकास का कोई तर्कसंगत प्रश्न ही नहीं उपस्थित होता। वस्तुतः इसका उद्‌भव एवं विकास तभी संभव हुआ होगा जब भौतिकवादी तत्वों के आधार पर सामाजिक संगठन बनने शुरू हुए होंगे और भौतिक संसाधनों को प्राप्त करने के लिए छोटे–मोटे कबीलाई युद्ध होने लगे होंगे जो बाद में चलकर साम्राज्यवादी युद्धों में परिवर्तित हुए।

इस प्रकार संस्थागत अथवा वर्गीय दासता का प्रारम्भ 'युद्धदासों' के रूप में ही हुआ होना प्रतीत होता है। यद्यपि व्यक्तिगत दासों का अस्तित्व सेवक के रूप में और प्रारम्भ से माना जा सकता है।

सैंधव सभ्यता काल में पुरातात्विक आधार पर दासों के अस्तित्व को स्वीकार किया जाता है। उनकी सामाजिक–आर्थिक जीवन शैली और नगरीय स्वरूप के आधार पर दासता की उपस्थिति का अनुमान सहज ही लगाया जा

सकता है। वैसे भी एक कृषि एवं व्यापार प्रधान नगरीय संरचना बिना कार्यकारी वर्ग के संभव नहीं है और कार्यकारी वर्ग में दासों की उपस्थिति निश्चित रूप से रही होगी।

वैदिक काल में इनके बारे में स्पष्ट जानकारी सर्वप्रथम ऋग्वेद से आये दास–दस्युओं के सन्दर्भ से होती है।

उत्तरवैदिककालीन लौह आधारित नगरीय क्रान्ति (जैसा कि स्पष्ट है कि आधुनिक खोजों में लोहे की प्राचीनता 1500 ई0पू0 तक जाती है जिसके साक्ष्य मल्हार, नल का टीला, चंदौली और झूँसी से मिलते हैं) में दासों की महत्वपूर्ण भूमिका से इंकार नहीं किया जा सकता है। जिस तरह से कृषि योग्य जमीनों का विकास हुआ और गंगा–यमुना का दोआब क्षेत्र संसाधन सम्पन्न हुआ उसमें इस वर्ग का महत्वपूर्ण स्थान रहा होगा।

मौर्यकाल में कौटिल्य के अर्थशास्त्र और अशोक के अभिलेखों से इनकी महत्ता का अनुमान लगाया जाता है। कौटिल्य ने इनका उल्लेख एक वर्ग के रूप में 'दासकल्प' शीर्षक के अन्तर्गत किया है। अशोक के शिलालेखों में भी दासों–भृतकों के साथ अच्छे व्यवहार किये जाने का उल्लेख इनके महत्व को दर्शाता है।

मौर्योत्तरकालीन एवं गुप्तकालीन दौर में इनका महत्व बढ़ा रहा जो गुप्तोत्तरकाल या पूर्वमध्यकाल में अत्यधिक बढ़ गया जिसका प्रमुख कारण इस काल की सामंतवादी सामाजिक संरचना थी। भूमिदानों की अधिकता, क्षेत्रीय

राज्यों का विकास, व्यापार–वाणिज्य का ह्रास जैसी प्रवृत्तियों ने अर्थव्यवस्था की गति को अवरूद्ध कर दिया और इस अवरूद्ध अर्थव्यवस्था में दासों का प्रयोग अधिकांशतया कृषिदासों के रूप में किया जाने लगा। इसी प्रवृत्ति ने 'सर्फडम' की अवधारणा को जन्म दिया। ह्वेनसांग ने भी शूद्रों को 'कृषक' कहकर निम्न वर्गों की बदलती स्थिति की ओर इशारा किया है।

प्रस्तुत सन्दर्भ में यह तथ्य दृष्टव्य है कि परम्परागत हिन्दुवादी शास्त्रीय विधान में प्रस्तावित सामाजिक संरचना में दासों को कोई स्थान नहीं दिया गया है। यहाँ मात्र ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र वर्ग का ही विधान किया गया है। अर्थव्यवस्था का सारा भार इसमें वैश्य वर्ग पर छोड़ा गया है। जबकि सभी वर्गों के सेवक के रूप में शूद्रों को नियोजित किया है। किन्तु यहाँ उल्लेखनीय है कि इस परम्परागत सामाजिक विभाजन में सैद्धान्तिक और व्यावहारिक विभिन्नता परिलक्षित होती है। इसीलिए सभी वर्गों के लिए आपद्धर्म का विधान प्रस्तुत किया है। वस्तुतः दासों को भले ही उत्पादन प्रक्रिया में स्थान न दिया गया हो लेकिन इनके महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। प्रायः ऐसा प्रतीत होता है कि निम्न आर्थिक स्थिति के कारण इनका भी समायोजन शूद्रों, कर्मकारों, श्रमिकों जैसे सेविवर्ग के रूप में कर दिया गया। इसलिए इनको पृथक् रूप से स्थान देने की जरूरत नहीं पड़ी।

अंतिम निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि दासता विषयक इतिहास का उद्भव वैश्विक रूप से भौतिकवादी, सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि

में हुआ है। अपने विकास की प्रक्रिया में इसके स्वरूप में देश, काल एवं सामाजिक–भौतिक वातावरण के सापेक्ष भिन्नता भी परिलक्षित होती है। तथापि दासों की हीन अवस्था और शोषण इसकी स्थायी विशेषता थी।

प्रस्तुत सन्दर्भ में उल्लेखनीय है कि प्राचीन भारतीय इतिहास में दासों को एक अलग जाति मानकर अध्ययन न किया जाए क्योंकि इससे अनेक भ्रान्तियाँ उत्पन्न होती है। इसी तरह दासों को पूरी तरह शूद्र वर्ण, कर्मकार वर्ग अथवा सेवि वर्ग से पृथक् करना संभव नहीं है। वस्तुतः दासों का अध्ययन एक कार्यकारी सेविक वर्गीय संरचना के रूप में किया जाना चाहिए जिसमें विभिन्न जातियों एवं वर्गों के आर्थिक रूप से कमजोर/विपन्न लोग सम्मिलित होते थे। क्योंकि आर्थिक दृष्टि से कमजोर तबके में सर्वाधिक संख्या शूद्रों की होती थी, फलतः दास वर्ग की संरचना में भी सर्वाधिक प्रतिनिधित्व इसी वर्ग का रहा होगा।